अर्धवार्षिक हिंदी ई-पत्रिका

कृषि ज्ञान सुधा

जुलाई 2025 अंक

ISBN: 987-93-343-6466-8 कृषि ज्ञान सुधा - जुलाई 2025

सतावर की खेती है काफी लाभकारी

डा. दिनेश राय, डा. आर के रंजन एवं सुभाषी कुमार
डा. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

सारांश

शतावरी एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है जिसका उपयोग प्राचीन चिकित्सा पद्धतियों में होता आया है। इसमें रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने, महिला स्वास्थ्य सुधारने और कई रोगों के इलाज के गुण पाए जाते हैं। इसकी खेती हाल के वर्षों में आयुर्वेदिक मांग के चलते बढ़ी है। शतावरी की खेती हल्की दोमट मिट्टी, मध्यम तापमान और उचित जल निकासी वाली भूमि में सफल होती है। इसकी फसल लगभग 24 महीनों में तैयार होती है और 400 क्विंटल/हेक्टेयर तक उपज देती है। वैज्ञानिक विधियों से इसकी खेती किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकती है। शतावरी की जड़ें औषधीय उपयोग हेतु उबालकर, सुखाकर प्रसंस्कृत की जाती हैं। रोग एवं कीट प्रबंधन, समय पर सिंचाई और निराई-गुड़ाई इसकी सफल खेती के लिए आवश्यक हैं।

सतावर अथवा शतावरी भारतवर्ष एवं एशिया के अन्य देशों अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया में प्राकृतिक रूप से पाई जानेवाली बहुवर्षीय आरोही लता है। सतावर के औषधीय उपयोगों से भारतवासी काफी पूर्व से परिचित हैं तथा विभिन्न भारतीय चिकित्सा पद्धतियों में इसका कई प्रकार की बीमारियों में प्राचीन काल से ही उपयोग होता आ रहा है। इसके औषधीय गुण के कारण राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में इसकी मांग काफी बढ़ गई है। बिहार में किसानो के मध्य सतावर के खेती का प्रचलन पिछले कुछ वर्षो में काफी बढ़ गया है। बिहार में यह समस्तीपुर, मुजफ्फरपुर, बेगूसराय, वैशाली भोजपुर, कैमूर, मधुबनी, पूर्वी चम्पारण, में काफी क्षेत्रफल में किसान सफलतापूर्वक खेती कर रहे हैं। सतावर की लताये काफी लम्बी, विशाल घनी, अतिशाखित, पत्ररहित, कंटकयुक्त तथा पत्र सदृश शाखायें होती हैं। इसकी जड़ से कई शाखाएं और लताएं एक साथ निकलती हैं। पौधे की शाखाएं कठोर तथा पत्तियां नुकीली होती हैं। ग्रीष्म ऋतु में इसकी लताओं का ऊपरी भाग सूख जाता है तथा पुनः वर्षा ऋतु में हरा हो जाता है । सितंबर अक्टूबर माह में पुष्प सफेद गुच्छों में तथा फल छोटे गोल हरे निकलते हैं जो फल तथा बीज बनाते हैं। इसके मूल स्तंभ से जड़ों का गुच्छा निकालता है जिसे कंद (ट्यूबर) कहते हैं। कंद का ही विभिन्न प्रकार के औषधि निर्माण में उपयोग किया जाता है।

औषधीय हेतु प्रायोज्य अंग: कंद

रासायनिक संगठन: इसके कंद सदृश जड़ का स्वाद शर्करा की उपस्थिति के कारण मीठा होता है। शर्करा के अतिरिक्त इसकी जड़ में श्लेष्मा एवं सेपोनिनन्स होता है। इसके ताजे पत्रभास कांड में डायोसजेनिन-4, सेपोनिन्स (सतावरीन), सेपानिनन्स में ग्लाइकोसाइड्स (सारसा सेपोजेनिन) रहामनौस तथा ग्लुकोज पाये जाते हैं।

औषधीय गुण:

उपयोग: सतावर का उपयोग विभिन्न प्रकार के शक्तिवर्धक, मेधावर्धक उत्पाद एवं औषधीय निर्माण में किया जा रहा है। सतावर शरीर में प्रतिरोध झमता, स्वस्थ शुक्राणु के विकास एवं पौरुष को बढ़ता है। यह पुरुषों की सूजन और यौन समस्याओं में काफी कारगर है। यह महिलाओं के बांझपन के इलाज हेतु भी प्रयुक्त किया जाता है। सतावर दुग्धवर्धक के रूप में जाना जाता है। यह महिलाओं, पशुओं-भैसों तथा गायों में दुग्ध बढ़ाने में काफी प्रभावी सिद्ध हुआ है तथा वर्तमान में इससे संबंधित कई दवाईया बनाई जा रही हैं। हेमेटेमेसिस, हर्पीस, हाइपर एसिडिटी, ल्युकोरिया आदि

ISBN: 987-93-343-6466-8 कृषि ज्ञान सुधा - जुलाई 2025

के इलाज़ में प्रयोग किया जा रहा है। विभिन्न चर्म रोगों जैसे त्वचा का सूखापन, कुष्ठ रोग, खांसी, डिहाइड्रेशन, दस्त, खसरा, पुराना बुखार आदि को ठीक करने में भी मदद करता है। इस जड़ी बूटी के उपयोग से संधि शोथ, पेट का अल्सर, गुर्दे, फेफड़े और पेट की सूजन के इलाज काफी सहायक रहा है ।

मृदा एवं जलवायु: सतावर की खेती बलुई दोमट भूमि, जिसमें जल निकास की पर्याप्त व्यवस्था हो, इसकी खेती के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है। सतावर का मुख्य उपयोगी भाग इसमें जड़ें होती हैं जो प्रायः 6 से 9 इंच तक भूमि में जाती हैं। राजस्थान की रेतीली ज़मीनों में तो कई बार ये डेढ़-डेढ़ फीट तक लंबी भी देखी गयी हैं। भारतवर्ष में इसकी खेती सभी प्रदेशों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। सतावर के लिए गर्म आर्द्र जलवायु अच्छी होती है। ज्यादा ठंडे प्रदेशों में खेती से कम उपज प्राप्त होती है। जलवायु जहाँ का तापमान 10-50° सेल्सियस, वार्षिक वर्षा 250 मि०मि० हो, में सतावर की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

खेत की तैयारी: सतावर कंद वाली फसल है अतः खेत की तैयारी अच्छी से करनी चाहिए। खेत की एक गहरी जुताई कल्टीवेटर से मई-जून में कर दें एवं 5 टन गोबर की सड़ी खाद एवं 50 किग्रा नीम की खली मिलाकर पाटा चलाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए। सतावर को समतल खेत या मेढ पर लगाते है । मेढ पर लगाना काफी फायदेमंद होता है। खेत में 60-60 सें.मी. की दूरी पर 9 इंच ऊँची मेड़ियां बना दी जाती हैं।

किस्मे: सतावर की जंगली एवं खेती होने वाली कई किस्मो की खोज की गई है जिनमें प्रमुख हैं- एस्पेरेगस सारमेन्टोसस, एस्पेरेगस कुरिलस, एस्पेरेगस गोनोक्लैडो, एस्पेरेगस एडसेंडेस, एस्पेरेगस आफीसीनेलिस, एस्पेरेगस प्लुमोसस, एस्पेरेगस फिलिसिनस, एस्पेरेगस स्प्रेन्गेरी आदि। इनमें से एस्पेरेगस एडसेन्डेस को तो सफेद मूसली के रूप में पहचाना गया है जबकि एस्पेरेगस सारमेन्टोसस महाशतावरी के नाम से जानी जाती हैं। महाशतावरी की लता अपेक्षाकृत बड़ी होती है तथा मुख्यतया हिमालयी क्षेत्रों में पाई जाती है। सतावर की एक अन्य किस्म एस्पेरेगस आफीसीनेलिस मुख्यतया सूप तथा सलाद बनाने के काम आती है तथा बड़े शहरों में इसकी अच्छी मांग है। इनमें से औषधीय उपयोग में सतावर की जो किस्म मुख्यतया प्रयुक्त होती है वह है एस्पेरेगस रेसीमोसम, जिसके बारे में विवरण यहां प्रस्तुत किया जा रहा हैं।

बीज की मात्राः

सतावर की खेती 3 से 5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है ।

बिजाई की विधिः सतावर की बिजाई की दो प्रमुख विधियां है

१. बीज द्वारा नर्सरी तैयार करकेः यह सतावर की बिजाई यह काफी प्रचलित विधि है जिसमें बीजों से नर्सरी में पौधे तैयार किए जाते हैं फिर इसकी रोपाई की जाती है। नर्सरी लगाने का उचित समय मई-जून है। 1X10 मी० की क्यारी बनाकर नर्सरी लगाना चाहिए तथा नर्सरी छायेदार स्थानों में लगाना चाहिए। नर्सरी में जल-प्रबन्ध की उचित व्यवस्था करनी चाहिए तथा सड़ी हुई गोवर, बालू एवं मिट्टी यथोचित मात्रा में मिला कर ऊंची क्यारियाँ का निर्माण करना चाहिए। 5 कि०ग्रा० बीज को क्यारियों के ऊपर छिड़कने के बाद मिला देते है एवं घास, खर अथवा पुआल से ढक देते है। नमी बनाये रखने के लिए आवश्कतानुसार पानी का छिड़काव करते रहते है। बीजों में अंकुरण प्रांरभ 10 से 15 दिनों के बाद होने लगता है। सतावर के पुराने बीजों में अंकुरण बहुत कम लगभग 40 प्रतिशत ही रहता है। अतः ताजे बीजों का ही प्रयोग करें। पौधे लगभग 6-7 सप्ताह के बाद मुख्य खेत में लगाने के लिए तैयार हो जाते है । नर्सरी अथवा पौधशाला में बीज बोने की जगह इन बीजों को पौलीथीन की थैलियों में डाल करके भी तैयार किया जा सकता है। पौधों की रोपाई प्रत्यारोपण का

ISBN: 987-93-343-6466-8 कृषि ज्ञान सुधा - जुलाई 2025

समय अगस्त-सितम्बर होता है। पौधों को 60 ग 60 से०मी० की दूरी पर प्रत्यारोपित करना चाहिए।

पुराने पौधों की डिस्क द्वाराः खुदाई के समय कंद के साथ छोटे-छोटे जुड़े दूसरे नये पौधों का विकास होता है जिन्हें डिस्क कहते हैं। इस डिस्क को अलग करके पॉलिथीन बैग में लगा दिया जाता है एवं 20 से 25 दिनों के बाद इसको मुख्य खेत में लगाने में प्रयोग किया जाता है।

आरोहण की व्यवस्थाः सतावर के पौधे में लता के सही विकास के लिए आरोहण आवश्यक है। इसके आरोहण के लिए प्रत्येक पौधे के पास सुखी लकड़ी या बांस के डंडे गाड़ दिए जाते हैं जिससे लताएं चढ़कर सही तरह से वृद्धि कर सकें

खाद और उर्वरक

खेत की तैयारी के समय 1.0 से 1.5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की सड़ी हुयी खाद, 1 क्विंटल वर्मिकम्पोस्ट, 50 किग्रा. नीम की खली की आवश्यकता पड़ती है और जहां तक सम्भव हो सके तो रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग न करें।

निराई गुड़ाईः पौध रोपण के तीन महीने बाद खेत में खरपतवार दिखने लगते है । अच्छी पैदावर के लिए खेत में वर्ष में दो बार निराई गुड़ाई करके खेत से खर पतवार निकाल देना चाहिए।

सिंचाई एवं खरपतवार नियंत्रण: पौधो को मुख्य खेत में रोपण के बाद एक हल्की सिचाई करनी चाहिए तथा जब पौधे बढ़ने लगे तो एक महीने के अन्तराल अथवा खेत में नमी के अनुसार सिचाई करनी चाहिए। सतावर की जड़ ही आर्थिक उत्पाद होती है। अतः सतावर की जड़ के विकास के लिए मृदा में नमी, भुरभुरा एवं खरपतवार-रहित होना अतिआवश्यक होता है। खेतों में प्रति महीने एक निकौनी जरूर करनी चाहिए ताकि खरपतवार जड़ों के विकास में किसी तरह की बाधा उत्पन्न नहीं कर सके।

पौधा संरक्षणः इस फसल में सामान्य तौर पर कीट-व्याधि का प्रकोप कम होता है। सतावर के प्रमुख रोग की पहचान, लगने वाले कीट एवं समेकित रोग प्रबंधन दिये गये अनुसार करें ।

रोग प्रबंधन

१. सतावर किट्ट

रोग के लक्षणः रोग के लक्षण तनों एवं शाखाओं पर देखे जा सकते है । सर्वप्रथम तनों एवं शाखाओं पर नारंगी एवं उभरे हुये हल्के पीले रंग के धब्बे दिखाई देते है । संक्रमण बढ़ने पर धीरे-धीरे धब्बों का रंग गाढ़ा भूरा या काला हो जाता है। संक्रमण ज्यदा होने पर पौधा ऊपर से सुख जाता है।

रोगजनक: पक्सीनिया अस्पेरेगी

रोगचक्र एवं अनुकूल वातावरण: यह एक एकाश्रयी कवक अपना जीवन चक्र सतावर पर ही पूरा करता है। चार प्रकार के स्पोर इसमे पाए जाते है। रोगजनक पादप अवशेषों पर काफी समय तक जीवित रहता है। अधिक आर्द्रता वाले स्थान एवं कम या ज्यादा पानी होने पर रोग का प्रकोप ज्यादा होता है।

१. सर्कोस्पोरा पर्ण चित्ती:

रोग के लक्षण:- रोगग्रस्त नुकीली पत्तियों एवं छोटे शाखाओं की सतह पर छोटे -छोटे गोलाकार धब्बे बनते है इन धब्बों का रंग बीच का भूरा छोटे तथा किनारे भूरे लाल रंग के होते है। रोग निचे से ऊपर की तरफ बढ़ता है। प्रभावित पौधा संक्रमण के बाद पीला होकर सूखकर गिर जाता है । कंद का विकास कम होता है ।

रोगजनक:- सर्कोस्पोरा अस्पेरेगी

रोगचक्र एवं अनुकूल वातावरण:- रोगग्रस्त फसल अवशेष ही प्राथमिक संक्रमण का कारण बनते है। अनुकूल वातावरण में शिशिरातिजीवी बीजाणु में कोनिडिया का अंकुरण होता है तथा आरंभिक संक्रमण होता है। द्वितियक संक्रमण के धब्बों पर उत्पादित बहुसंख्यक कोनिडिया द्वारा होता है जो वायु, वर्षा के प्रवाह आदि द्वारा स्वस्थ पत्तियाँ पर पहूचते हैं।

ISBN: 987-93-343-6466-8 कृषि ज्ञान सुधा - जुलाई 2025

२. फ्यूजेरियम म्लानि या गलन

रोग के लक्षणः पौधा कमजोर एवं सतावर की नुकीली पतियाँ भूरी हो जाती है। शाखाएँ मुलायम होकर सूखने लगती है । फिर सम्पूर्ण पौधा सूख जाता है। यह फयूजेरियम जाति के कवक द्वारा होता है। कंद का विकास एवं गुणवत्ता प्रभावित होती है।

रोगजनक: फ्यूजेरियम जातियाँ

रोगचक्र एवं अनुकूल वातावरण: रोगजनक एक वर्ष से दुसरे वर्ष तक संक्रमित पौधों की कंद एवं अवशेषों में एवं भूमि में जीवित रहता है । प्रतिकूल परिस्थिति में भी क्लेमाइडोस्पोर के द्वारा जिवित रहने की क्षमता होती है जो अगले फसल तक सुरक्षित रहते है अनुकूल वातावरण में यह संक्रमण कर देते हैं ।

३. फाइटोफ्थोरा राट

रोग के लक्षण:- पौधे के भूमी के पास वाले तने पर मुलायम भूरे रंग के जलसिक्त धब्बे बनते है। प्रभावित भाग के उत्तक मर जाते है और कंद सिकुड़ जाते है। अधिक आर्द्रता एवं निम्न तापक्रम पर यह रोग उग्र रूप धारण कर लेता है और काफी नूकसान करता है।

रोगजनक:- फाइटोफ्थोरा प्रजातियाँ

रोगचक्र एवं अनुकूल वातावरण:- रोगजनक के कंदो के साथ -साथ भूमि में छूटे रोगी पौध अवशेषों में आगामी वर्ष तक सुरक्षित रहते हैं। यह संक्रमित कंद ही प्राथमिक निवेषद्रव्य का काम करते हैं। अनुकूल वतावरण में नये पौधों पर संक्रमण करता है और पुरे पौधों पर फैल जाता है एक बार पौधों में संक्रमण हो जाने पर कवक असंख बीजाणु बनते है और पुरे खेत में फैल जाते हैं। रोग का प्रसार जल, हवा व किड़ो द्वारा होता है। रोग उच्चआर्द्रता, कम तापमान नमी रोग के आक्रमण बढ़ाने के लिये अनुकूल होता है।

सतावर में समेकित रोग प्रबंधनः

- सदैव उन्नत किस्मों के प्रमाणित बीज ही प्रयोग करें ।
- गर्मी के दिनों में गहरी जुताई करे जिससे प्राथमिक संक्रमण कम हो जाता है ।
- जल निकास का उचित प्रबंध एवं संतुलित खाद का प्रयोग करें ।
- अत्यधिक घने पौधों की रोपाई नही करनी चाहिऐ।
- खेत मे पाये जाने वाले फसल अवशेष एवं खरपतवार को निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए ।
- खेत में 75 किग्रा/ हेक्टेयर नीम की खली का प्रयोग अवश्य करें ।
- फ्यूजेरियम म्लानि से बचाव के लिए खेत में ट्राइकोडर्मा बायोएजेन्ट 5 - 10 किग्रा/ हेक्टेयर का प्रयोग करने से मृदा जनित रोगों का प्रकोप कम होता एवं पौधो में रोग से लड़ने की झमता बढ़ जाती है ।
- पौधशाला में फाइटोफ्थोरा रोग का प्रकोप ज्यादा होने पर मृदा को थाइरम या कैप्टान से 3 ग्राम/वर्ग मीटर की दर से करें ।
- किट्ट का प्रकोप विखाई देने पर जिनेब 75 प्रतिशत नामक दवा की 2.5 किलोग्राम मात्रा को 800-1000 लीटर पानी मे घोल बना कर प्रति हेक्टेयर छिडकाव करने से रोग को नियंत्रित किया जा सकता है ।
- खेत में सर्कोस्पोरा पर्ण चित्ती के लक्षण दिखने पर मैंकोजेब दवा की 2-3 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करे।

कीट प्रबंधनः

सतावर पर कीटों से नुकसान कम होता है कभी कभी पतियों पर सतावर बीटल, दीमक, सूत्रकृमी एवं काटने एवं चूसने वाले का प्रकोप होता है इससे बचने के लिए नीमयुक्त कीटनाशी जैसे, निम्बेसीडीन (2 मि. ली. / लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए। नीम तेल (1.0þ) का

ISBN: 987-93-343-6466-8 कृषि ज्ञान सुधा - जुलाई 2025

छिड़काव भी लाभदायक होता है । ज्यादा नुकसान होने पर ही रासायनीक कीटनाशी जैसे क्लोरपारीफास तरल का छिड़काव (1.0 मि. ली./ली. पानी) अथवा डाइमेथोएट की 5 मीली दवा 10 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। दीमक, सूत्रकृमी की लिए क्लोरपारीफास एवं फूराडान का प्रयोग किया जा सकता है ।

फसल-उत्पादन: फसल रोपण के 24 महीने बाद खुदाई के लिए तैयार हो जाती है। कभी कभी बाजार में मांग कम होने पर या फसल की सही कीमत नहीं मिलने पर किसान तीन वर्ष बाद भी खुदाई करते हैं। खुदाई का उपयुक्त समय अप्रैल-मई माह का होता है जब पौधों का विकास रुक जाय तथा पौधे पीले पड़ने लगें एवं पौधों पर लगे हुए बीज पक जाएं तो इसकी जड़ों को कुदाल एवं खुरपी की मदद से खोद कर अलग करना चाहिए। ऐसी स्थिती में कुदाली की सहायता से सावधानीपूर्वक जड़ां को खोद लिया जाता है। खुदाई से पहले यदि खेत में हल्की सिंचाई देकर मिट्टी को थोड़ा नर्म बना लिया जाए तो फसल को उखाड़ना आसान हो जाता है।

उपजः फसल का उत्पादन कच्ची अवस्था में 400 क्विंटल प्रति हे० होता है जो सूख कर 40-55 क्विटल प्रति हे० हो जाता है।

कंदों को सुखाने का तरीका: खोद कर निकाली गयी कंदों/जड़ों को पानी से धोकर मिट्टी को साफ कर लेना चाहिए जड़ों को उखाड़नें के उपरान्त उनके ऊपर का छिलका उतार लिया जाता है। ऐसा चीरा लगा करके भी किया जाता है। सतावर की जड़ों के ऊपर पाया जाने वाला छिलका ट्यूवर्स से अलग करना आवश्यक होता है। छिलका उतारने के लिए सतावर की कन्दों को पानी में हल्का उबालना पड़ता है तथा तदुपरान्त ठंडे पानी में थोड़ी देर रखने के उपरान्त छिलाई की जाती है। छीलने के उपरान्त इन्हें छाया में सुखा लिया जाता है तथा पूर्णतया सूख जाने के उपरान्त वायुरूद्ध बोरियां में पैक करके बिक्री हेतु प्रस्तुत कर दिया जाता है। कन्दों को उबालने, छिलाई पश्चात् सुखाने पर कन्द हल्का पीला रंग का हो जाता है। तथा फिर हल्की धूप में सुखाना चाहिए। जब जड़ों में नमी 8-10 प्रतिशत हो जाये तो इसे भण्डारण कर बिक्री के लिए रख लेना चाहिए।

चित्र 1: सतावर का पौधा

ISBN: 987-93-343-6466-8 कृषि ज्ञान सुधा - जुलाई 2025

समाप्त

ISBN: 978-93-343-6466-8

कृषि ज्ञान सुधा